1506 ई. में फ्रांस में हुआ था। काल्विन को दृढ़ विश्वास था कि उसे अपने विचार अकाट्य तर्कों के आधार पर रखने होंगे, तभी वह कैथोलि चर्च का सफल विरोध कर सकेगा। उसने चर्च से सम्बन्ध तोड़ लिया और अपने विचार लोगों के सामने रखने शुरू कर दिये। उसकी युवावस्था के बावजूद उसके प्रशंसक तेजी से बढ़ने लगे। फ्रांस के शासक फ्रांसिस ने उस पर प्रतिबंध लगाना चाहा लेकिन इससे उसकी मदद ही हुई और वह फ्रांस छोडकर स्विट्जरलैण्ड चला गया, जहाँ मृत्यु-पर्यन्त रहा। वहाँ वह ज्विंग्ली के सम्पर्क में आया। वहीं कैथोलिक चर्च के समानान्तर प्रोटेस्टेन्ट चर्च के सिद्धान्त का प्रतिपादन करने के लिए एक महत्वपूर्ण पुस्तक 'ईसाई धर्म के आधारभूत सिंद्धान्त' (इन्स्टीट्यूट ऑफ क्रिश्चियन रिलिजन) लिखी। यह अब तक की सबसे महत्वपूर्ण पुस्तक थी। इतने तर्कपूर्ण और विद्वतापूर्ण सिद्धान्तों का प्रतिपादन इससे पूर्व किसी ने नहीं किया था। इसमें उसने ज्विंगली और लूथर के विचार लिए, वर व्याख्या सर्वथा उसकी अपनी थी। पुस्तक काफी लोकप्रिय हुई। इसमें उसने सुधारवादी तथा कैथोलिक दोनों चर्चों की तुलना की। यहां यह स्मरणीय है कि लूथरवाद में पोप और संगठन के विरोध के अतिरिक्त धर्म के कर्मकांडों के विषय में उल्लेखनीय परिवर्तन का प्रस्ताव नहीं था परन्तु काल्विन धर्मशास्त्र के बाहर किसी भी कर्मकाण्ड को स्वीकार करने के पक्ष में नहीं था।

काल्विन में अद्‌भुत संगठन-शक्ति थी। उसने जेनेआ नगरवासियों को संगठित किया और उन्हें धार्मिक तथा आर्थिक स्वतन्त्रता दिलायी। शीघ्र ही जेनेआ एक धर्म प्रधान नगर-राज्य बन गया जिसका वह सर्वोच्च नेता और नियन्ता था। उसने एक विशुद्ध नैतिकवादी व्यवस्था कायम की । जरा सी चारित्रिक कमजोरी पर वह कठोर दण्ड देता था। वह स्वयं सादा जीवन व्यतीत करता था। धीरे-धीरे प्रोटेस्टेन्ट लोगों में उसकी वह धाक हो गयी, जो कैथोलिक लोगों में पोप की थी। उसे 'प्रोटेस्टेन्ट पोप' कहा जाने लगा। इतनी सफलता के पीछे उसके सिद्धान्त थे। मनुष्य की मुक्ति न कर्म से हो सकती है न आस्था से, वह तो बस ईश्वर के अनुग्रह से ही हो सकती है। बाइबिल को ही मुक्ति का एकमात्र उपाय माना। व्यक्ति और ईश्वर के बीच कोई माध्यम नहीं माना। संस्कारों का महत्व कम करके व्यक्ति के पवित्र आचरण एवं नैतिक अनुशासन पर बहुत बल दिया। काल्विनवाद विशेष रूप से मध्यवर्ग में काफी लोकप्रिय हुआ। यह स्विट्जरलैण्ड एवं फ्रांस में धीरे-धीरे फैलने लगा। लूथर के कार्यक्षेत्र जर्मनी में भी काल्विनवाद का प्रसार हुआ और अन्त में उसे मान्यता भी मिली। उत्तरी नीदरलैण्ड एवं स्कॉटलैण्ड में इस विचारधारा का तेजी से प्रसार हुआ। इस तरह सत्रहवीं शताब्दी आते-आते अपने कट्टर अनुशासन के कारण काल्विनवाद सारे यूरोप में फैल गया, जबकी लूथरवाद मुख्यतया जर्मनी का राष्ट्रीय धर्म ही रहा।

लूथर और काल्विन : एक तुलना

दोनों ने करीब-करीब एक ही समय कैथेलिक चर्च का विरोध कर पृथक् सम्प्रदाय खड़े किये। दोनों ने ईसा मसीह ओर बाइबिल को पूर्णतः स्वीकार किया। लेकिन पोप की सत्ता को नकारा। दोनों ने विशेषकर मध्यवर्ग को प्रभावित किया। दोनों ने आडम्बर का विरोध किया लेकिन उनके सुधार एवं इसके तरीके भिन्न-भिन्न थे-

(i) लूथर चर्च को बिना पूरी तरह नकारे जर्मनी के राष्ट्रीय हितों को ध्यान में रखते हुए थोड़े से परिवर्तन करके संतुष्ट रहा जबकि काल्विन अधिक परिवर्तन का पक्षधर रहा।

(ii) लूथर राज्य और धर्म के बीच स्पष्ट रेखा नहीं खीच सका लेकिन काल्विन ने दोनों के कार्यक्षेत्र में स्पष्ट विभाजन किया।

(iii) लूथर चमत्कारों को प्रतीक के रूप में स्वीकार करने को तैयार था किन्तु काल्विन ने चमत्कारों को बिल्कुल नकार दिया।

(iv) लूथर आस्था को मुक्ति का आधार मानता था। काल्विन के लिए कर्म या आस्था से कोई फर्क नहीं पड़ता था क्योंकि व्यक्ति की नियति पहले से ही निश्चित होती है।

(v) लूथर ने अपने अनुयायियों के चरित्र एवं आचार-व्यवहार पर विशेष ध्यान नहीं दिया लेकिन काल्विन ने चारित्रिक अनुशासन को अत्याधिक महत्व दिया।

ऐंग्लिकन विचारधारा

जर्मनी और स्विट्जरलैण्ड की तुलना में इंग्लैण्ड में धर्म सुधार आन्दोलन के विकास में चर्च और संगठन के धार्मिक दोषों के स्थान पर राजनीतिक महत्वाकांक्षा ज्यादा बलवती थी।

सोलहवीं शताब्दी में एक छोटे से किन्तु महत्वपूर्ण प्रश्न ने इंग्लैण्ड में एंग्लिकन विचारधारा को जन्म दिया। प्रश्न ट्यूडर वंश के शासक हेनरी अष्टम् (1500-1547) से सम्बन्धित था । हेनरी के कोई पुत्र न था। यह बहुत महत्वपूर्ण नहीं था लेकिन हेनरी को कुछ दिनों से अपनी प्रमुख परिचारिका एन बोलिन से प्यार हो गया था और वह उसे अपनी पत्नी बनाना चाहता था। यह तभी सम्भव था जब उसका अपनी पत्नी कैथरिन से सम्बन्ध विच्छेद हो जाता, किन्तु यह मुश्किल था। जब पोप ने हेनरी की बात नहीं मानी, तो हेनरी ने खुलकर विरोध करने का निर्णय लिया। सदियों से चले आ रहे पोप के हस्तक्षेप और आर्थिक हानि के कारण असन्तुष्ट इंग्लैण्ड को पोप विरोधी नीति अपनाने में कोई कठिनाई नहीं हुई। सबसे पहले हेनरी ने रोम जाने वाले धन पर प्रतिबन्ध लगा दिया तथा फिर क्रेनमर को कैन्टरबरी का बिशप बनाया। फिर उसने अपने तथा कैथरिन के सम्बन्ध विच्छेद की आज्ञा घोषित करवायी और एन से विवाह कर लिया। अब पोप के लिए भी उसके विरुद्ध कदम उठाना अनिवार्य हो गया था। अतः उसने हेनरी को धर्मच्युत कर दिया। हेनरी ने भी 1534 ई. में पोप से सम्बन्ध विच्छेद कर लिया और इंग्लैण्ड के शासक को 'इंग्लैण्ड के चर्च का सर्वोच्च अधिकारी' घोषित किया। इस प्रकार कैथोलिक चर्च से एक झटके में सम्बन्ध टूट गया।

हेनरी की मृत्यु के बाद उसके उत्तराधिकारी एडवर्ड अष्टम् ने प्रोटेस्टेन्ट विचारधारा को आगे बढ़ाया। इसके काल में 'बुक आफ कॉमन प्रेयर' (सामान्य प्रार्थना पुस्तक) प्रकाशित हुई, जिसमें 42 सिद्धान्तों की घोषणा की गयी। इसमें प्रोटेस्टेन्ट विचारों को स्थापित किया गया। एडवर्ड की मृत्यु के बाद उसकी बहिन मेरी ट्यूडर के समय कैथोलिक चर्च को फिर से मान्यता दी गयी लकिन विरोधी कानूनों के बावजूद उसके जीवनकाल में प्रोटेस्टेन्ट विचारधारा फैलती रही। मेरी के पश्चात् एलिजाबेथ गद्दी पर बैठी। एलिजाबेथ धर्म का इस्तेमाल राजनीतिक हितों के लिए करना चाहती थी। उसके शासनकाल में आंग्ल-धर्म का अन्तिम स्वरूप निश्चित हुआ। '42 सिद्धान्तों' को थोड़ा संशोधित करके '39 सिद्धान्तों' के नाम से लागू किया गया। ऐंग्लिकन चर्च को वैधानिक सत्ता प्रदान करने के लिये 'सर्वोच्चता और एकरूपता का कानून' पास किया गया।

प्रोटेस्टेन्टवाद को धीरे-धीरे इंग्लैण्ड की जनता ने स्वीकार कर लिया। यद्यपि कुछ विरोध अवश्य हुआ किन्तु एलिजाबेथ की योग्यता एवं दूरदर्शिता की वजह से इंग्लैण्ड का राष्ट्रीयचर्च स्थायी साबित हुआ। इस प्रकार सोलहवीं शताब्दी के अंत तक इंग्लैण्ड में एक ऐसे राष्ट्रीय चर्च की स्थापना हुई जो कर्मकाण्ड में रोमन और धर्मशास्त्रीय संदर्भ में काल्विनवादी था।

धर्मसुधार आन्दोलन की सफलता एवं इसके कारण

मार्टिन लूथर ज्विंगली तथा काल्विन के प्रयत्नों से यूरोप में धर्म-सुधार आन्दोलन चल पड़ा और कई देशों में सुधारकों के सिद्धांत के अनुसार चर्च के संगठन में परिवर्तन किये गए। फ्रांस और स्पेन को छोड़कर यूरोप के अधिकांश देशों में प्रोटेस्टेन्ट धर्म जड़ पकड़ने लगा। इंग्लैण्ड, स्कॉटलैण्ड, नार्वे, स्वीडन तथा उत्तरी जर्मनी के राज्य पोप के खिलाफ उठ खड़े हुए। इन देशों में प्रोटेस्टेन्ट धर्म कायम हुआ तथा स्वतन्त्र राष्ट्रीय चर्चों की स्थापना हुई। इंग्लैण्ड में प्रोटेस्टेन्ट धर्म के प्रचार में वहाँ के शासक हेनरी अष्टम् का योगदान उल्लेखनीय रहा। वह पोप से अलग होकर इंग्लैण्ड के चर्च का सर्वेसर्वा बन गया।

लूथर एवं काल्विन को वह सफलता प्राप्त हुई जो मूल धर्म प्रचारकों वाइक्लिफ एवं हस को प्राप्त न हो सकी थी। इसके कई कारण थे। वाइक्लिफ एवं हस ने लोगों को सामाजिक असमानता के विरुद्ध भड़काया था जिससे अनेक लोग इनके विरोधी हो गये थे किन्तु लूथर एवं काल्विन ने यह गलती नहीं की। लूथर ने किसानों द्वारा विद्रोह करने पर उनको अपना समर्थन नहीं दिया। उसने तो इसकी निन्दा तक की। अतएव सुविधा प्राप्त वर्ग उनके विरोधी न होकर सहायक हो गए ओर धर्म सुधार में उनकी सहायता की। धर्म सुधार आन्दोलन के सफल होने का दूसरा कारण यह था कि लूथर एवं काल्विन ने राष्ट्रीयता की भावना को पोप की सर्वोपरिता के विरुद्ध उभारा। उनकी दृष्टि में किसी राज्य के राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक एवं धार्मिक मामलों में विदेशी हस्तक्षेप अनुचित था। राज्य आंतरिक मामलों में सार्वभौम है- ऐसी इन सुधारकों की धारणा थी। अतः किसी भी देश के धर्म पर विदेशी पोप की सत्ता को इन्होंने अनुचित ठहराया। इन विचारों का यह परिणाम हुआ कि शासकगण पोप के नियन्त्रण से मुक्त होने के लिए अधिक जागरूक एवं सचेष्ट हो गये। उन्होंने धर्म सुधारकों को प्रोत्साहन एवं प्रश्रय देना प्रारम्भ किया। चर्च में जमा सम्पत्ति पर राष्ट्र के अधिकर की अवधारणा ने शासकों को धर्म सुधार आन्दोलन में सक्रिय भूमिका निभाने के लिये प्रेरित किया। इस आन्दोलन की सफलता का तीसरा कारण यह था कि अब चर्च की उपयोगिता घट गई थी। पुनर्जागरण के पश्चात् शिक्षा का कार्य स्वतंत्र रूप से होने लगा था। बदली हुई सामाजिक एवं वैचारिक परिस्थितियों ने भी धर्म सुधार आन्दोलन को बल प्रदान किया।